International Journal of Engineering Research & Management Technology
ISSN: 2348-4039
Volume 10, Issue-6 November-December- 2023
Email: editor@ijermt.org www.ijermt.org

मुगलकालीन समाज में हिन्दु व मुस्लिम सम्बन्धों का परस्पर सामंजस्य

Nikita Rani, M.A. History, (UGC-NET),

Assistant Professor, B.R.College Higher Education of Technology, Deoband, Maa Shakumbhari University, Saharanpur.

Mail ID:nikitapundir0861@gmail.com

1.1 प्रस्तावना

मुगल सम्राटों ने एक सुदृढ़ साम्राज्य की स्थापना के उद्देष्य से हिन्दुओं की राज्य की सेवाओं में भिन्न–भिन्न पदों पर नियुक्त किया था। हिन्दुओं की नियुक्तियों के तीन प्रमुख कारण थे– प्रथम सम्राट के सम्बन्धियों को लाभान्वित करना, द्वितीय एक विष्वसनीय सेना का गठना करना और वित्त और न्याय विभागों की आवष्यकताओं की पूर्ति करना। जो लोब सम्राट के घनिष्ठ होते थे, उन्हें ऊँचे पद दिये गये। न्याय विभाग में अधिकांशतः उलेमा की प्रधानात थी। कुछ मामलें में जहॉ मुकदमा लड़ने वाले हिन्दू होते थे, वहां न्याय विभाग में हिन्दू कानून की व्याख्या करने के लिए पण्डितों की नियुक्ति की गई। बाबर और हुमायूं के समय इस संबंध में किसी स्पष्ट नीति का विकास नहीं हुआ था, लेनिक अकबर के समय इस विषय पर गम्भीरता से विचार किया गया।

मुगल सम्राट अपनी नयी पोशाकों के प्रति काफी जागरूक थे। उन्होंने कई नई पेशाकों का आविष्कार किया। सम्राट हुमायूँ ने लबादे के एक नये स्वरूप का अविष्कार किया, जो कमर से कटा होता था। और सामने खुला रहता था। हुमायूँ इसे ज्योतिष विज्ञान की अपनी रूचि के अनुसार कई रंगों में काबा से ऊपर पहनता था। यह कोट कई अवसरों पर अमीरों एवं अन्य लोगों को खिलअत के रूप में प्रदान किया जाता था हूमायूँ के सन्दर्भ में एक अन्य परिधार इलबग्चा है जो एक प्रकार का ढीला कोट है। सम्राट अकबर की वस्त्रों में अत्यधिक रूचि थी इसके लिए उसने कुशल दर्जियों की नियुक्ति की, जिनहोंने उसके दरबार में लगे कपडो में सुधार किया। अबुल फजल ने आइन–ए–अकबरी में ग्यारह प्रकार के कोट का उल्लेखप किया हौ। तकौचिया, पेशवाज, शाहअजीदा, गदर, काबा इत्यादि। चकमन तथा फरगुल का प्रयोग बरसाती कोट के रूप में किया जाता था। फरगुल एक प्रकार का रोएदार कोट था जिसका उपयोग शीतकाल में किया जाता था, हुमायूँ ने सर्वप्रथम इसका प्रयोग किया था।

अकबर भी नक्षत्रों के अनुसार वस्त्र धार करता था। वह हिन्दुओं की तरह धोती भी पहनता था जिसके चुनट किये हुए निचले भाग में मोती जड़े रहते थे फादर रूडोल्फ ने अकबर को सर्वप्रथम सिल्क कली धोती पहने हुये देखा। मान्सरेट ने अकबर की पोशाक के विषय में लिखा है – "जहाँपनाह सिल्क के कपड़े पहनते थे जिस पर साने की कढ़ायी हुयी रहती थी। जहॉपनाह का लबादा उनके जूतों तक रहता था ओर उनकी एड़ियॉ तक ढकी रहती थी वह मोतियों एवं सोने के आभूषण पहने रहते थे अपने पिता की भॉति जहागीर भी वस्त्रों में रूचि रखता था। वह कलंगीदार पगड़ी धारण करता था। वह हीरा जवाहरात जड़ित जंजीर गले में पहनता था उसके वस्त्रों में भी हीरा मोती तथा अन्य रत्न जड़े रहते थे। जहॉगीर के आदेशानुसार कोई भी उसके वस्त्रो को अनुकारण नहीं कर सकता था, केवल सम्राट द्वारा उपहार में दिये गये उसी प्रकार के

सस्त्र अमीर धारण कर सकते थे। शाहजहॉ को भी वस्त्रो में विशेष रूचि थी। वह मुगलों के वैीाव और शान–शैकत के अनुरूप वस्त्र धारण करता था। औरंगजेब जो कि एक कट्टरपन्थी सम्राट था साधारण वस्त्र पहनता था। रात्रि के लिए भिन्न वस्त्र होते थे।

सभी मुगल सम्राट पगड़ी पहनते थे व जिसे कूलाह कहते थे। अबुल फजल ने कशमीरी टोपी का भी उल्लेख किया है। शासक वर्ग जूते का प्रयोग करते थे। साधारण हल्के जूते का एक भेद दिल्ली में सलीमशाही जूतो के नाम से अभी प्रसिद्ध है जूते तुर्की डिजाइन के होते थे– सामने से नुकीले ऊपर से खुले हुये छोटी एड़ी के होते थे जो आवश्यकता पड़ने पर आसानी से उतारे जा सकते थे। अमीर मखमल के जूते पहनते थे जिसमे रेशम के फीते लगे रहते थे और किसी–किसी में हीरे एवं अन्य मूल्यवान पत्थर लगे रहते थे। समकालीन कवियों तुलसीदास एवं सूरदास के काव्य में 'पनही' तथा 'उपानह'नामक विभिन्न प्रकार के जूतों का उल्लेख मिलता है। बर्नियर के अनुसार भारत में अत्यधिक गर्मी के कारण शासक वर्ग के लिए मोजे के प्रयोग सम्भव नही था। परन्तु कुछ इतिहासकार मोजे के प्रयोग का उल्लेख करते है।

उच्चवर्गीय हिन्दू तथा मुस्लिम जिन्हें हम अमीर अथावा कुलीन वर्ग भी कह सकते है, प्रायः शासक वर्ग की तरह के वस्त्र ही पहनते थे। परन्तु बहुमूल्य रतनजड़ित वस्त्रों से वे लोग वंचित थें। विशेष अवसरों के लिए वे सम्राट द्वारा प्रदान किय गये खिलअत का प्रयोग करते थे। उलेमा वर्ग साधारण वस्त्र पहनता था। वे विशेष प्रकार की टोपी तथा पगड़ी बांधते थे। इसलिए उन्हें दस्तर'बंदान तथा कुलह दरान कहा जाता था। अमीर वर्ग के लोग अपनी वेशभूषा पर खूब खर्च करते थे। समृद्ध मुसलमान सलवार और कुर्ता तथा युस्त पतलून पहनते थे। अपने कुर्ते के ऊपर वे एक छोटा कमर तक का कोट पहनते थे। काबा ऊपर पहने जाने वाला वस्त्र था जो घुटनों के नीचे तक रहता था। अमीर लोग कन्धे पर एक शाल रखते थे। जिस पर विभिन्न रंगों से ऊन की कढ़ायी हुयी रहती थी। कमर को सुन्दर स्कार्फ से बांधने का फैशन था। पगड़ी सभी समुदायों का सिर पर पहनने का एक आम पहनावा था। मुसलमानों का यचह पहनावा सफेद रंग का गोलाकार होता था। जबकि हिनदुओं का रंगीरन, सीधा, ऊँचा और नुकीला होता था। प्रारम्भ में मुगल घुड़सवार सेना का शिरोवस्त्र भारी पगड़ी थी हिन्दू अमीरों की स्त्रियाँ धोती, साड़ी तथा मुस्लिम अमीरो की स्त्रियाँ चूड़ीदार पायजामा, सलवार, कुर्ता, ओढ़नी तथा बुर्का पहनती थी दुपट्टे का प्रचलन दोनों वर्गों मे था। हिन्दू और मुसलमान दोनो ही वर्गो की महिलायें सूती कपड़े के दुपट्टे से सिर ढकती थी। धनी महिलाये कश्मीरी ऊन के कपड़े पहनती थी। उनमें से कुछ अच्छे प्रकार की कश्मीरी शाल प्रयोग करती थी। उच्च वर्गीय मुस्लिमों में हिन्दू पगड़ी लोकप्रिय हो रही थी हिन्दू कुलीन वर्ग पोशाकों के सम्बन्ध में पूर्णतः उच्चवर्गीय मुसिलमों का अनुकरण करता था।

आर्थिक संसाधनों के अभाव में साधारण वर्ग के लिये अच्छा वस्त्र पहनना सम्भव नहीं था। बाबर ने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि साधारण वर्ग के लोग लंगोट पहनकर नंगेपाव चलते थे। स्त्रियाँ अपने शरीर को ढकने के लिये केवल धोती पहनती थी। अबुलफजल के अनुसार बंगाल के अधिकांश निवासी रहते थे। वे मात्र शरीर के आवश्यक अंगों को ढक सकते थे। निजामुद्दीन अहमद ने गोलकुण्डा के निवासियों के बारे में लिखा है कि वे केवल आधे शरीर को ढकपाते थे। गरीब जनता के शरीर से वस्त्र पूरी तरह फट जाने की स्थिति में ही उतर पाता था। ऋतु विशेष जैसे जाड़ो के लिये भी निम्न वर्ग के लोगों के पास वस्त्रों की कोई उचित व्यवसथा नहीं थी। विभिन्न समुदायों के निर्धन लोगों की वेशभूषा लगभग एकसी थी। मजदूर किसान तथा अन्य मेहनतकस लोग तप का सूती लंगोट पहना करते थे जो कमर के चारो तरफ बंधा रहता थ और घुटने तक का भाग ढका रहता था। जाड़े में गरीब लोग छोटे ऊन के कोट पहनते थे जो वर्षो तक

चलता था। उत्तर भारत में गरीब लोग जाड़े और गर्मी से बचने के लिए सिर पर एक दुपट्टानुमा कपड़ा बांधते थे। पंजाब और कश्मीर में जाड़ो में ऊन की टोपी भी पहनी जाती थी।

साधारण परिवार के ब्राहमण धोती तथा कमीज पहनते थे। स्त्रियों के वस्त्रों में उस समय केवल दो ही प्रकार की पोशाकें प्रचलित थी। एक ही लम्बी चादर या मलमल का उत्तम कपड़ा (जिसका आधुनिक रूप साड़ी है) और छोटी बांहों वाला एक चोला (आधुनिक शब्द चोली), जो पीठ में कमर के निचले हिस्से तक होता था। साथ ही युवतियों एवं विवाहित महिलाओं के लिए गहरे रंग की एक अतिरिक्त अंगिया सम्मिलित थी। इस पोशाक से एक फायदा यह होता था कि इससे उनके हाथ कार्य करने के लिए खुले रहते थे ओर साड़ी के एक किनारे या पल्लू से थोड़ा सिर ढका रहता था। एक अन्य पोशाक में जो कि दोआब क्षेत्र में अधिक लोकप्रिय थी एक लहगा, एक चोली और ऊपर एक अंगिया तथा साथ में एक यपटिया, जो कभी–कभी सिर ढकने के काम में कई जाती थी, सम्मिलित थी। उच्च वर्गो की मुस्लिम महिलायें साधारणतः ढीला शरारा, कमीज, लम्बा दुपट्टा ओर बुर्का पहनती थी। उल्लेखनीय है कि स्त्रियों की पोशाक के ये अंग हिन्दुस्तान में प्रायः अभी भी विद्यमान है। डा० के०एम० अशरफ के अनुसार यह कहना अनुचित न होगा कि नीला रंग शोक सूचक रंग था और विशेष मामलों को छोडकर स्त्रियाँ दैनिक उपयोग में उस रंग की पोशाक नहीं पहनती थी। स्त्रियाँ रंग विरंगी साड़ियाँ भी पहनती थी। गुजरात की सम्पन्न वर्ग की महिलाये सोने की किनारी वाले चमड़े के जूते पहनती थी।

साधुओं और संतों का कोई निर्धारित वेश नहीं था। दिखावा करने वाले साधु ओढ़ने के लिए मृगछाला रखते थे, किन्तु महात्मा पुरूष इन सब दिखावों एवं आडम्बरों से दूर रहते थे। कुछ साधु अपनी वस्त्र सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये एक लंगोटा और तूम्बी से संतोष कर लेते थे। अन्य साधु जो अपने सम्प्रदाय के नियमों का पालन करते थे, सामान्यतः अपने सर मुडाते, कानों में भारी बालियां पहनते और अपनी देह में राख लपेट लेते थे। वे कुछ निर्धारित वस्तुएं, जैसे एक गेरूआं चोगा, शक चक्र, एक त्रिशूल, जपने के लिये एक माला, काष्ठ–पादुकाएँ, एक छतरी, एक मृगछाला और एक भीक्षा पात्र भी देखते थे।

इस प्रकार मुगलकालीन लोगों की वेशभूषा पर एक समग्र दृष्टि डालने पर हम जाते है कि पगड़ी दोनो समुदायों का सिर पर पहनने का एक आम पहनावा था। मुसलमानो का यह पहनावा सफेद रंग का गोलाकार होता था, जबकि हिन्दुओं का रंगीन, सीधा, ऊँचा और नुकीला होता था। स्त्रियों की एक आम पोशाक साडी थी, जिसे शरीर के बीच में लपेटा जाता था और फिर उससे सिर ढक लिया जाता था। इसके अतिरिक्त सीने के चारों ओर एक छोटा–सा अंग वस्त्र भी पहनती थी, जिसे अंगिया कहते थे। सलवार कुर्ता मुसलमानो में एक आम पोशाक थी। घघरा भी काफी लोकप्रिय था। धनी महीलाये कश्मीरी ऊन के कपड़े पहलती थी। उनमें से कुछ अच्छे प्रकार की कश्मीरी शाल प्रयोग करती थी। हिन्दु और मुस्लिम दोनो ही वर्गो की महिलायें दुपट्टे से सिर ढकती थी। मुस्लिम औरतें जब भी घर से बाहर निकलती थी, बुर्का पहनती थी। दूसरी तरफ जनसाधारण बहुत कम वस्त्रों में अपना काम चलाते थें। उनके वस्त्र इतने कम थे कि वे शरीर को पूरी तरह ढकने में अपर्याप्त थे। डा० चोपड़ा ने लिखा है कि मुस्लिम शासन की स्थापना के बाद भी हिन्दू समाज में धोती, साडी तथा कुर्ता उतना ही लोकप्रिय रहा है, जितना गौतम बुद्ध तथा महावीर के समय में था।

1.2 खानपानः

मुगलकाल में शासक वर्ग के लिये भोजन की विशेष व्यवसथा होती थी। मुगल सम्राटों तथा अमीरों को भारतीय फल तथा मिठाईयां काफी पसन्द थी। आगरा बाजार में सुगन्धित मिठाइयों की खूब बिक्री होती

थी। अमीर प्रायः प्रतिभोज का आयेजन करते रहते थे एक अतिथि को लगभग बीस प्रकार के पकवान परोसे जाते थे। मुगल काल में मांस खाने का कम शोक था। मुगल गदृदी को पुनः प्राप्त करने से पहले हूमायुँ ने मांस खाना छोड दिया था अकबर की मांस खाने की में ज्यादा रूचि नहं थी। वह कभी–कभी मांस खाता था। बदायूँनी के अनुसार सम्राट ने मांस के साथ–साथ लहसुन तथा प्याज खाना भी बन्द कर दिया था। जहांगीर ने रविवार तथा गुरूवार को पशुओं के वध पर प्रतिबन्ध लगा दिया था। जहाँगीर को गुजराती तरीके से बनायी गयी खिचड़ी पसन्द थी। अबुल फजल ने आइन–ए–अकबरी में विभिन्न सब्जियों, मांसाहारी व्यंजनों एवं मिठाईयों की लम्बी सूची दी है। मुस्लिम उच्च वर्ग के लोग चावल से काबुली दुज्यबिरियान, कीमा पुलाव एवं अन्य व्यंजन बनाते थे, जिसमें मक्खन एवं काली मिर्च मिलाते थे। मिष्ठान में हलवा, मिठाई, जलेबी आदि चीजें उत्तम प्रकार की चीनी एवं फलूदा से बनायी जाती थी। आसफ खान द्वारा सर टामसरों के स्वागत में दिये गये भोज के वर्णन से शाही व्यंजन का पता चलता है।

भारत के जिन क्षेत्रों में धान प्रमुख फसल थी वहाँ के ग्रामीण लोगों का मुख्य भोजन चावल था। बंगाल, उड़ीसा, कश्मीर, असम तथा दक्षिण भारत धान की फसल के प्रमुख क्षेत्र थे। इसी तरह राजस्थान और गुजरात में ज्वार और बाजरा की फसल ज्यादा होने के कारण यहाँ के ग्रामीण लोगों का प्रमुख भोजन ज्वार और बाजरा से निर्मित खाद्य पदार्थ था। इसी प्रकार कश्मीर में एक निम्न श्रेणी का चावल साधारण वर्ग का सामान्य भोजन था। बिहार के किसानों का मुख्य आहार मटर के आकार के अन्न पर निर्भर था, जिसे 'किसारी' कहते थे। गुजरातियों को चावल एवं दही बहुत पसन्द था। जहाँगीर ने उल्लेख किया है कि कश्मीरी लोगों का मुख्य भोजन उबला चावल एवं उबली हुई नमक मिश्रित सब्जी था।

अमीरों के प्रतिभोज खाद्य पदार्थों एवं अन्य वस्तुओं को विशाल मात्रा के लिए प्रसिद्ध थे। एक मेहमान को औसतन बीस से पचास पकवान तक परोसे जाते थे। हमें एक अमीर द्वारा कोल (अलीगढ़) में गुलबदन बेगम को दिए गए एक भोज का मनोरंजक वर्णन मिलता है। इस प्रकार के प्रतिभोजों का आयोजन अमीरों की सामाजिक प्रतिष्ठा से जुड़ा हुआ था। भोज में भोजन की प्रचुरता ही अतिथि–सत्कार का मापदण्ड था और अपव्यय का कोई महत्व नहीं था क्योंकि मातहत कर्मचारियों, घरेलू सेवकों और शिक्षकों को बचा हुआ भोजन बाँट दिया जाता था।

हिन्दुओं की रसोई में प्रयोग होने वाले बर्तन पीतल एवं ताँबें के बने होते थे जबकि मुसलमानों के यहाँ मुख्यतः मिट्टी एवं जस्ते के बर्तन प्रयुक्त होते थे। हिन्दू साफ–सफाई पर बहुत ध्यान देते थे और रसोई जिसे साधारणतः चौका कहते थे, ये गाय के गोर से लीपते थे। रसोई में जूता आदि पहनकर नहीं जा सकते थे। भोजन के पहले स्नान किया जाता था। शराब, अफीम, भांग एवं तम्बाकू मुगलकाल में प्रयुक्त होने वाले नशीले पदार्थ थे। पान, चाय एवं काफी भी इसी वर्ग के साथ रखी जाती थी। आम आदमी इनके प्रयोग को ठीक नहीं मानता था और इसे एक बुराई के रूप में देखा जाता था। लगभग सभी मुगल सम्राटों ने इनके प्रयोग पर कठोर प्रतिबन्ध लगाये, जिसकी वजह से लोगों में शराब का कम प्रचलन था। अत्यधिक मदिरा पान एवं अनैतिक चरित्र के लिए कठोर दण्ड की व्यवस्था थी।

तम्बाकू पुर्तगालियों द्वारा 1605 ई0 में पहली बार भारत गया। इसके पश्चात् बहुत शीघ्रता से यह आम लोगों के बीच प्रचलित हो गया। धूम्रपान एक दशक में ही इतना अधिक प्रचलन में आ गया कि इसके द्वारा स्वास्थ्य पर बुरे प्रभाव पड़ने की वजह से जहाँगीर ने 1617 ई0 में एक कानून बनाकर इसके प्रयोग को प्रतिबन्धित कर दिया परन्तु इस आदेश का बहुत सख्ती से पालन नहीं हुआ। मनूची ने लिखा है कि केवल दिल्ली में ही प्रतिदिन पाँच हजार रूपये तम्बाकू कर के रूप में प्राप्त होते थे।

1.3 सौन्दर्य प्रसाधन, श्रृंगार एवं आभूषण

प्राचीन काल से ही भारतीयों को सौन्दर्य प्रसाधन सम्बन्धी विधियों जैसे बाल रंगने की विधि, गंजेपन को दूर करने की दवा एवं शराब से बाल साफ करने के लिए लगाये जाने वाले पदार्थों का ज्ञान था। मुगल काल में भी इन सब का खूब प्रचलन रहा। दाढ़ी पर कंघी करना और इत्र लगाना तथा बहुमूल्य पोशाकें पहनना सम्मान और कुलीनता के द्योतक माने जाते थे। आधुनिक साबुन, पाउडर और क्रीम की जगह घसूल, उपताना और चन्दन का लेप तथा विभिन्न प्रकार के मूल्यवान इत्र प्रयोग में लाये जाते थे।

हिन्दुस्तानी स्त्री के लिए सुहाग या वैवाहिक जीवन का मतलब अपने शरीर पर आभूषणों का प्रयोग था। इसमें कुलीनता एवं प्रदर्शन की भावना भी निहित थी। हिन्दू स्त्री केवल विधवा होने की अवस्था में ही वह अपने आभूषणों एवं जवाहरातों का त्याग करती थी तथा अपने सिर से सुहाग की निशानी के रूप में लगाया जाने वाला सिंदूर भी मिटा देती थी। मुगलकालीन राजमहन सामान्यतः नदियों के किनारे बने होते थे। कुछ महल तो पथरीली चट्टानों पर बने होते थे, जिसके चारों ओर कृत्रिम झील हुआ करती थी। सम्भवतः मुगलों ने हिन्दू शहरों के विशिष्ट तत्व, अर्थात् महलों में सरोवर, मन्दिर, चौड़ा और खुला स्थान और उनकी इमारतों की ऊँचाई और सौष्ठव में कुछ अपने विशिष्ट तत्व जोड़े और इस प्रकार मुगलकालीन नगरों का स्वरूप विकसित हुआ। इन महलों के दो भाग होते थे–बाह्य और आन्तरिक। भीतरी हिस्से में रानियों एवं राजकुमारियों के कक्ष, व्यक्तिगत सभागार, मनोरंजन कक्ष, स्नानगृह आदि होते थे जबकि दूसरे भाग में दीवान–ए–आम, दीवान–ए–खास, भण्डारग्रह आदि होते थे।

शाही महल की एक विशेषता घड़ियाल का प्रयोग तथा घंटों की घोषणा थी। हुमायूँ में चन्द्रमास की पहली और चौदहवी तिथि को दिन में कई बार जैसे उषाकाल में, सूर्योदय के पश्चात्, सूर्यास्त के समय और रात में ढोलकी ध्वनि से समय की घोषणा करने की पद्धति प्रारम्भ की। उसके उत्तराधिकारी अकबर ने ुनः घड़ियाल की प्राचीन पद्धति अपना ली; और जहाँ भी सम्राट का तम्बू जाता घण्टा और घड़ियाल उसके साथ चलते थे। राजधानी के बाहर शिकार एवं क्रीड़ा यात्रा या सरकारी दौरों के लिए अनेक प्रकार के तम्बुओं का प्रयोग किया जाता था। मुगल सम्राट हुमायूँ ने अनेक ्कार के छोटे तथा बड़े शामियानों और तम्बुओं के आकार निर्धारित कर दिये, जो सम्राट की कुशलता एवं रूचि को प्रदर्शित करता है। हुमायूँ ने एक शामियाना इतना बड़ा बनवाया कि उसे खड़ा करने हेतु खम्भों के लिए अनेक ढाचों की आवश्यकता होती थी।

गाँवों में समृद्ध जमींदार एक साथ कई झोपड़ीनुमा मकान बनाते थे। ये मकान हवादार एवं भण्डारण क्षमता के अनुरूप होते थे। उनमें से कुछ मकान दो मंजिले थे तथा उन पर सुन्दर टैरिस भी थे। इन मकानों की विशेष बात यह थी कि इनमें प्रत्येक मंजिल के ऊपर छज्जे की भी व्यवस्था थी जो छायादार एवं हवादार रहता था तथा गर्मियों में मकान को ठंडा रखने में सहायक होता था। गरीबों के मकान फूस की झोपड़ियाँ थीं जिसमें न कोई खिड़की होती थी और न कोई कमरा। अनाज रखने के लिए कुछ बन्दोबस्त करना एक अन्य झोपड़ी का निर्माण करने जैसा था। इन झोपड़ियों में हवा के लिए सिर्फ एक दरवाजा था, यह हवा, प्रकाश एवं प्रवेश के लिए एक मात्र रास्ता था। इन मकानों के फर्श को गाय के गोबर से लीपा जाता था। इन झोपड़ियों में सोने के लिए एक चटाई होती थी और चावल रखने के लिए एक गडढा होता था। भोजन पकाने के लिए एक या दो बर्तन होते थे।

फ्रायड एवं पेलसार्ड का यह विचार कि बैठने के लिए कुर्सियों की पूर्ण अनुपस्थिति थी, अतिशियोक्ति पूर्ण है। अब्दुर रज्जाक जो कि विजयनगर में फारसी राजदूत था तथा सर टामस रो ने कुर्सियों के प्रयोग का जिक्र किया है। उस समय के गद्देदार आसन आदि कुर्सियों से अधिक चौड़े थे। कुर्सियों के पाये लकड़ी

के सहारे से जुड़े रहते थे। उच्च वर्ग के लोग रेशमी गद्दियों की लम्बी कुर्सियों का उपयोग करते थे जबकि साधारण वर्ग के लोग कटहल की लकड़ी और मूंगे की बनी तथा सूती धागे से बुनी पीढ़ियों का प्रयोग करते थे। सम्पन्न लोगों के पास दीवान और गद्दियाँ थी जबकि साधारण वर्ग के लोग लोहे की बैठकियों से ही अपना काम चलाते थे।

1.4 त्यौहार एवं उत्सव

मुगलकाल में हिन्दू और मुसलमान दोनों ही समुदायों के लोग अपने–अपने त्यौहार बड़े उत्साह के साथ मनाया करते थे। पूरे देश में इनके मनाने में एकरूपता थी, परन्मतु स्थानीय तथा भौगोलिक परिस्थितियों का प्रभाव उन पर पड़ता था। ये स्थान–स्थान पर मामूली अन्तर के साथ पाये जाते थे तथा इनकी प्रसिद्धि में भी स्थान विशेष पर अन्तर था। साज–सज्जा प्रकाश की व्यवस्था, पटाखे, सुन्दर जुलूस, सोने, चाँदी, हीरे–मोती आदि के आभूषणों का प्रदर्शन भारतीय मुसलमानों के त्यौहारों के आवश्यक अंग थे जो कि हिन्दू संस्कृति के प्रभाव का द्योतक था। अकबर एवं जहाँगीर ने कुछ हिन्दू त्यौहारों को अपनाया एवं उन्हें राजदरबार के कैलेण्डर में स्थान दिया। हुमायूँ ने तुलादान को स्वीकार किया। अकबर ने होली, दशहरा एवं बसन्त पंचमी को खूब ढंग से मनाया तथा जहाँगीर एवं शाहजहाँ ने इस प्रथा को कायम रखा। औरंगजेब ने अधिकांश हिन्दू एवं फारसी त्यौहारों को राजदरबार में प्रतिबंधित कर दिया था।

हिन्दुओं के त्यौहारों में रक्षाबन्धन का अपना विशेष महत्व है। श्रवण मास की पूर्णिमा को यह त्यौहार मनाया जाता है। इस अवसर पर बहन अपने भाई के हाथों में राखी बाँधकर अपनी रक्षा के लिए वचन माँगती है। ब्राह्मण तथा पुरोहित भी अपने संरक्षकों के हाथों में राखी बाँधते थे। मेवाड़ की महारानी कर्मवती ने हुमायूँ के पास राखी भेजकर बहादुरशाह के आक्रमण के समय उससे सहायता माँगी थी। रानी की सहायता के लिए हुमायूँ ने प्रस्थान किया था लेकिन कुछ विशेष परिस्थितियों के कारण वह उचित समय पर सहायता न कर सका। अकबर रक्षाबन्धन का त्यौहार मनाता था और अपनी कलाई पर राखी बँधवाता था। अबुल फजल के अनुसार यह भी एक प्रथा थी कि राजदरबारी एवं अन्य लोग राजा की कलाई को सुन्दर सिल्क के धागे से जिस पर मोती एवं कीमती पत्थर लगे होते थे, सजाते थे। जहाँगीर इसे निगादस्त कहता था। उसने आदेश दिया था कि हिन्दू अमीर एवं जाति के मुखिया उसके हाथों में राखी बाँधेंगें।

ईद–उल–जुआ (इदुल–अजाह), ईद–उल–फित्र, मुहर्रम, शबे–बरात, नौराज आदि कुछ प्रमुख मुस्लिम त्यौहार थे जो मुगल काल में मनाये जाते थे। मुगलकाल में ईद–उल–जुहा का पर्व बड़ी धूमधाम से मनाया जाता था। शहरों एवं गाँवों में पहले से ही तैयारियाँ शुरू हो जाती थी। इस अवसर पर स्नान करके तथा साफ वस्त्र पहनकर मुसलमान शहर के बाहर ईदगाह में सामूहिक रूप से नमाज पढ़ते थे। सम्राट जुलूस के साथ चलता था और कभी–कभी ईदगाह में ही ठहरता था। ईदगाह के नमाज में सम्राट सभी के साथ नमाज पढ़ता था। उसके सामने मस्जिद की सीढ़ी के नजदीक ऊँट की कुर्बानी दी जाती थी। मुगल सम्राट जहाँगीर स्वयं अपने हाथों से बकरों की कुर्बानी करता था। कुछ समृद्ध लोग अपने घर पर ही बकरों की कुर्बानी देते थे। बकरों की कुर्बानी इस्माइल को दिये गये बकरे की याद में दी जाती थी। मान्यता के अनुसार अल्लाह के आदेश पर इब्राहिम अपने पुत्र इस्माइल के बलिदान के लिए तैयार हो गये थे। इस अवसर पर लोग पकवान एवं मिठाईयाँ भी बनाते थे तथा अपने मृत रिश्तेदारों के नाम का फातिहा भी पढ़ते थे। ईद–उल–जुहा को बकरीद भी कहते हैं।

1.5 निष्कर्ष

हिन्दू एवं मुसलमान भिन्न–भिन्न तरीके से मित्रों, संबंधियों एवं बड़ों का स्वागत करते थे। मनूची लिखता है कि मुगलकाल में हिन्दू पाँच प्रकार से प्रणाम करते थे। अपने समान आयु के लोगों के बीच 'राम–राम' कहने की प्रथा थी। एक उच्च पदस्थ व्यक्ति जैसे गर्वनर, मंत्री या सेनानायक का स्वागत दोनों हाथ जोड़कर सिर के ऊपर उठाकर किया जाता था। छोटे लोग बड़ों का सम्मान झुककर एवं पैर छूकर करते थे। लोग अपने गुरूओं के सामने सीधे लेटकर उन्हें सम्मान देते थे। राजा भी इसी प्रकार का सम्मान पाता था। ब्राह्मणों को छोड़कर सभी वर्गों के लोग राजा के सामने साष्टांग लेटकर उन्हें सम्मान देते थे। ब्राह्मण लोग सिर्फ हाथ जोड़कर उसे सिर से ऊपर उठाकर सम्मान देते थे। सिख धर्म के प्रवर्तक गुरूनानक के विषय में प्रचलित हैं कि उन्होंने अपने शिष्यों से प्रणाम का उत्तर "सत–करतार" कहकर देने को कहा था।

मुस्लिम समुदाय के सभी वर्गों के लोग एक दूसरे का अभिवादन "सलाम" कहकर देते थे। लोग एक–दूसरे का स्वागत 'अल–सलाम आलेकुम' कहकर करते थे। इसके प्रति उत्तर में सामने वाला व्यक्ति "वा–लेकुम अल सलाम" कहता था। मित्रों में एक दूसरे का स्वागत अपने दाहिने हाथ को मस्तक तक उठाकर एवं शरीर के सामने झुकाकर किया जाता था। अबुल फजल में "कुर्निश" एवं "तस्लीम" का बादशाह के स्वागत में कहे जाने वाले शब्दों के रूप में उल्लेख किया है। "कुर्निश" में दाहिने हाथ की हथेली को मस्तक पर रखकर सिर को झुकाया जाता था। तस्लीम कहते समय व्यक्ति अपने दाहिने हाथ के पश्य भाग को जमीन पर रखकर धीरे–धीरे उठते हुए सीधे खड़े होकर हथेली को सिर पर रख लेता था। जमीन से उठते समय हाथ को सीने पर भी रखने की प्रथा थी। इसके बाद ही उसे सिर तक लाया जाता था। अकबर ने एक आदेश पारित किया था कि तस्लीम को तीन बार कहा जाए। अकबर ने एक अन्य प्रकार के अभिवादन करने के ढंग का प्रचलन किया जिसे 'सिजदा' कहते थे। इसमें बादशाह के सम्मुख सीधे लेटने की प्रथा थी। परन्तु कुछ रूढ़िवादी कठमुल्लाओं द्वारा यह कहकर इस प्रभा का विरोध किया गया कि यह मानव द्वारा मानव की पूजा है। फलस्वरूप अकबर ने दरबार–ए–आम में इस पर रोक लगा दी तथा व्यक्तिगत गोष्ठियों में इसकी अनुमति दे दी। यह प्रथा शाहजहाँ के शासनकाल में समाप्त हो गयी। शाहजहाँ ने इसके स्थान पर "जमीबोंस" का प्रचलन किया जिसमें जमीन को चूमने की प्रथा थी। कुछ समय बाद इस प्रथा का भी त्याग कर दिया गया तथा परम्परागत 'तस्लीम' को कुछ परिवर्तनों के साथ पुनः अपना लिया गया। अब इसे चार बार से कम नहीं कहा जाता था।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डब्ल्यू0एच0 मोरलैण्ड, दि अग्रेरियन सिस्टम ऑफ मुस्लिम इण्डिया, कैम्ब्रिज 1929, पेज–84
2. के0एम0 अशरफ, लाइफ एण्ड कण्डीशन ऑफ दे पीपुल ऑफ हिन्दुस्तान, दिल्ली, 1959, पेज–165
3. पे0एन0 चोपड़ा, सोसाइटी एण्ड कल्चर डयूरिंग मुगल एज आगरा, 1956 पेज– 20–25
4. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, मेडिवल इण्डियन कल्चर, आगरा, 1964, पेज–27
5. मोरलैण्ड, फ्राम अकबर टु औरंगजेग, लंदन, 1923, पेज7128
6. मोहम्मद यासीन, सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इण्डिया, लखनऊ, 1958, पेज–6
7. ए0 रशीद, सोसायटी एण्ड कल्चर इन मेडिवल इण्डिया, कलकत्ता, 1969 पेज–22
8. एस0एम0 युसूफ, सम एस्पेक्टस ऑफ इस्लामिक कल्चर, पेज–131–135
9. इरफान हबीब, दी एग्रेरियन सिस्टम ऑफ दी मुगल्स, बम्बई, 1963, पेज–94

10. उद्वत हरिशचन्द्र वर्मा, संपादक, मध्य कालीन खण्ड–2 (1540–1761), प्रथम संस्करण, 1963 हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विष्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित पेज–443

11. फ्रेंकोस, पेल्सर्ट, जहांगीर्स इण्डिया, अनुवाद डब्लू0एच0 मोरलैण्ड तथा पी0गल0, दिल्ली, 1925

12. ताराचन्द, इन्फ्लुएन्स ऑफ इस्लाम ऑन इण्डियन कल्चर, इलाहाबार, 1963

13. अवध बिहारी पाण्डेय, पूर्व मध्यकालीन भारत पृ0 240: लेटर मेडिवल इण्डिया, पृ0 12–13

14. ईष्वरी प्रसाद, लाइफ एण्ड टाइम्स ऑफ हुमायूँ, कलकत्ता, 1956, पृ0 202

15. जे0 चौबे, हिस्ट्री ऑफ गुजरात किगंडम, नई दिल्ली, 1975, पृ0 275

16. कर्नल टाड, एनल्स एण्ड एन्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान, जिल्द 3, ऑकसफोर्ड, 1920, सम्पादित – कूक, पृ0 364–65